जलविज्ञान एवं जल संसाधन
पर राष्ट्रीय संगोष्ठी
15-16 दिसम्बर, 1995, रूड़की

जल वैज्ञानीय अभिकलन में व्यवहारिक आवश्यकताएं

रमा शंकर वार्ष्णेय[1]

सारांश

इंजीनियरीय जल विज्ञान के अन्तर्गत हम अपवाह और उसके एक स्थान से दूसरे स्थान पर संचलन अध्ययन करते हैं। इंजीनियरीय योजनाओं में जल के उचित नियंत्रण एवं उपयोग के लिए अभिकल्प एवं प्रचालन में इस प्रकार का अध्ययन आवश्यक एवं लाभदायक होता है।

गत तीन दशकों में संसार में और भारत में जलवैज्ञानीय अभिकलन में नये नये सूत्र, नयी संकल्पनायें एवं निष्कर्ष, नये सिद्धान्त एवं अंकीय अभिकलित्रों पर प्रयोग करने हेतु गणितीय प्रारूपों का उदय हुआ है। परन्तु ज्यों ज्यों इस क्षेत्र में ज्ञानवृद्धि हुई है उससे अधिक अनुपात में अभिकलन में रक्षा कवच दिन प्रतिदिन मजबूत और व्यवहारिकता से दूर होता जा रहा है। अथवा कहिए कि जितना ज्ञानवर्धन हुआ है, उतने ही अनभिज्ञता गुणाक एवं सुरक्षा कारक बढ़े हैं। यह कहाँ तक व्यवहारिक है उसकी कुछ जल वैज्ञानीय घटकों के उदाहरणों से इस लेख में चर्चा की गई है।

प्रस्तावना

किसी भी जलाशय योजना में, बाँध के ऊपर या पार्श्व में बाढ़ प्रवाह को निकालने के लिए प्राविधान करना पड़ता है। जल वैज्ञानिक को निम्न बातों का मानांकन करना आवश्यक है:

(1) विभिन्न परिमाणों की बाढ़ों की संभाव्यता
(2) बाढ़ों एवं जलालेखों का चित्राम् (पैटर्न), एवं
(3) जलाशय का बाढ़ मात्रा पर प्रभाव एवं बाढ़ अभिगमन

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले दो दशकों में भारत में अनेकों नदी घाटी योजनाओं को क्रियान्वित किया गया। उस समय हमारी जल वैज्ञानीय जानकारी आनुभाविक सूत्र एवं तालिकाएं, युक्ति संगत विधि, एकक जलालेख संकल्पना एवं बाढ़ बारंबारता के अध्ययन तक सीमित थी। वृष्टि एवं अपवाह के आंकड़ों के अभाव में, उत्तर भारत में चरम बाढ़ का परिकलन डिकेन सूत्र एवं अनुभव के आधार पर बाढ़ बारम्बारता के अध्ययन से किया जाता रहा है। परियोजना के लिए जल–वैज्ञानीय सुरक्षा गुणांक की परिणीति, डिकेन सूत्र के स्थिरांक के मान एवं बारम्बारता अध्ययन में प्रत्यागमन काल की अवधि से नापी जा सकती थी। उस समय जो भी डिजाइन किए गये उनमें प्रत्यागमन काल अधिक से अधिक 1000 वर्ष ऊँचें बाँधों के लिए एवं लगभग 100–200 वर्ष बीयर एवं बैराजों के अभिकलन के लिए लिया गया।

---

1 इंजीनियर–इन–चीफ एवं विभागाध्यक्ष (से0नि0), सिंचाई विभाग, उ0प्र0,

कालान्तर में इस क्षेत्र में बहुत कार्य हुआ। हमारे यहाँ अन्वेषण कार्य मे भी गति आई और एकक जलालेख के साथ–साथ सांश्लेषिक एकक जलालेख विधि, बाढ़, बारम्बारता अध्ययन, संभाव्य अधिकतम वर्षा, मानक परियोजना वर्षा, अत्रिम जलालेख, वितरण जलालेख, तात्क्षणिक एकक जलालेख, पद्धति इंजीनियरी (सिस्टम इंजीनियरिंग), गणितीय प्रारूप आदि का विस्तृत अध्ययन हुआ।

पता चला कि जितने भी बांध हम लोगों ने बनाये या उनके उत्प्लावों की क्षमता तय की, वह काफी कम थी और हमारी नई जानकारी ने हमारे पहली चार पंचवर्षीय योजनाओं में बने समस्त बॉधों को असुरक्षित की श्रेणी में खड़ा कर दिया। यह बात दूसरी है कि सैकड़ों बांधों में सिवाय दो या तीन बांधों के उत्प्लावों को छोड़कर पूरे देश में अन्य बांधों में अधिकतम नापी हुई बाढ़, डिजाइन की गई बाढ़ की मात्रा से काफी कम रही। इस ज्ञानवर्धन का एक असर यह हुआ कि नई बनने वाली योजनाओं में चरम बाढ़ का मान पहले तय हुए मान से कई गुना बढ़ गया जिससे उत्प्लाव की क्षमता एवं परियोजना की लागत बहुत बढ़ गयी।

उपर्युक्त लिखने का यह अभिप्राय नही है कि यह सब अनावश्यक था। बात यह है कि अधिकतम बाढ़ का आंकलन परिस्थिति विशेष में ही आवश्यक है। एक ही सिद्धान्त से चरम बाढ़ आकलन 4–6 गुना बढ़ाना कुछ व्यवहारिक नही है। आइये इस पर विचार करें।

चरम बाढ़ का आंकलन

व्यवहारिक समाधान

किसी भी जल स्रोत विकास योजना के लिए चरम बाढ़ का आकलन एक विशेष समस्या है। सामान्यतः संभाव्य अधिकतम वर्षा एवं अपवाह का परिकलन करना योजना के लिए लाभदायक है परन्तु विशेष बांध का उत्प्लाव कितनी चरम बाढ़ के लिए अभिकलित हो इस पर व्यवहारिकता आवश्यक है। यदि हम ऐसा बांध डिजाइन करते हैं जिसके अनुप्रवाह में नगर एवं घनी बस्तियॉ हैं तो हमको सावधान होना पड़ेगा और संभाव्य अधिकतम वृष्टि एवं बाढ़ के लिए उत्प्लाव की क्षमता तय करनी पड़ेगी चाहे ऐसी बाढ़ का प्रत्यागमन काल 10,000 या 15,000 वर्ष का ही क्यों न हो। परन्तु बांध ऐसे स्थल पर है, ऊपर पहाड़ों में, जहॉ से बस्तियां एवं नगर काफी दूर हैं तो चरम बाढ़ की शिखर वाहिका अभिगमन से काफी कम हो जाएगी और उत्प्लाव की क्षमता 500–1000 वर्ष प्रत्यागमन काल के लिए डिजाइन कर सकते हैं। इसके लिए दो बातें आवश्यक हैं:–

1. उत्प्लाव क्षमता तय करते समय हम प्रत्येक विधि से अधिकतम संभावित विधि हो चाहे तमाम समायोजन गुणाकों के आधार पर अधिकतम संभाव्य बाढ़ का परिकलन करें चाहे बाढ़ बारम्बारता विधियों से विभिन्न प्रत्यागमन काल की बाढ़ों का आकलन करे, हम यह देखें कि यदि यह बाढ़ उत्प्लाव के ऊपर से बहकर नीचे जाती है तो कितनी जान माल की क्षति होगी। फिर हम बाढ़ का परिमाण एवं उससे उत्पन्न आर्थिक हानि का मूल्यांकन करें तो हमें उस विशेष बांध की उत्प्लाव क्षमता तय करने में सहायता मिलेगी। हो सकता है कि 1000 वर्ष प्रत्यागमन काल की बाढ़ से हानि लगभग उतनी ही हो जितनी 15,000 वर्ष प्रत्यागमन काल की बाढ़ से। फिर क्यों बांध को 15000 वर्ष की बाढ़ के लिए अभिकलित करके उसे मंहगा बनाया जाये। अतः उत्प्लाव की क्षमता संभावित हानि के आधार पर ही तय करना व्यवहारिक है। अतः यदि कोई बांध ऐसे स्थान पर हो जहां नगर एवं आवासीय क्षेत्र काफी अनुप्रवाह में हैं तो हमें उत्प्लाव कम परिमाण की बाढ़ के लिए परिकलन करने में कोई परेशानी नहीं होनी चाहिए।

2. यह आवश्यक है कि राज्य एवं भारत सरकार कम से कम आगामी 50 वर्षो में संभाव्य बांध एवं जलाशय के आवाह क्षेत्र एवं कम से कम 10 किलोमीटर अनुप्रवाह में बाढ़, मैदान क्षेत्र में कोई भी नई आवासीय योजना न बनने दे और न लोगों को बाढ़ मैदान में जबरदस्ती झुग्गी–झोंपडी बनाने दें (जैसा कि दिल्ली एवं अन्य नगरों में हो गया है और हो रहा है)। इसके लिये राज्य एवं भारत सरकार को कठोर रवैया अपनाना पड़ेगा। जब तक यह नहीं होता, तब तक बाढ़ से प्रभावित जन जीवन एवं हानि की समस्या प्रतिवर्ष विकरालतम होती जायेगी।

आनुभाविक सूत्र एवं मानचित्र

कुछ वर्ष पूर्व मैने यह सुझाव दिया था कि अन्य मानचित्रों की भॉति राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान प्रत्येक 5 या 10 वर्ष बाद देश का एक मानचित्र बनाये (जैसा आज से तीन दशक पूर्व डा. जोगेलकर ने बनाया है) जिसमें डिकेन सूत्र के आधार पर मानक अतंराल रेखायें हों। इस सुझााव पर कार्यवाही इस कारण संम्भ्सवतः नही हुई क्योकि आजकल इतनी उन्नत सैद्वान्तिक विधियों के होते हुए पुराने जमाने के आनुभाविक सूत्रों एंव विधियों का प्रयोाग पिछडापन दर्शाता है।

मै आज भी यह मानता हूं कि इस प्रकार के मानचित्र बहुत संगत एंव व्यवहारिक है। राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान तीन प्रकार के मानचित्र बना सकता है।

(अ) अधिकतम मापी हुई वर्षा के आधार पर डिकेन सूत्र के स्थिरांक की रेखायें
(आ) संभाव्य अधिकतम वर्षा (परिकल्पित) के आधार पर डिकेन सूत्र के स्थिरांक की रेखायें,
(इ) 1000 वर्ष के प्रत्यागमन काल (गम्बौल विधि के आधार पर) के लिये डिकेन सूत्र के स्थिरांक की रेखायें

राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान इन मानचित्रों को प्रत्येक 10 वर्ष बाद नवीनतम उपलब्ध आंकडें एंव परिकलन विधियों (गणितीय प्रारूप) आदि के आधार पर नवीनीकरण कर सकती है। ये मानचित्र उसी प्रकार होगें जैसे भारत का भूकंम्प क्षेत्र का मानचित्र जो कुछ वर्षो बाद भारतीय मानक संस्था द्वारा पुनरीक्षित होता रहता है।

मेरे इस व्यवहारिक सुझाव को जलविज्ञान के पंडित माने या ना मानें परन्तु आज भी प्रत्येक प्रान्त का चीफ इंजीनियर जब उल्प्लाव के लिये बाढ का परिमाण निर्धारण करता है तो डिकेन सूत्र का प्रयोग अवश्य करता है चाहे वह उन्नत परिकलन द्वारा निकाले हुए मान की जांच के रूप में ही क्यों न हों। यह जांच उसी प्रकार है जैसे चाप बोंध के डिजाइन के लिये अकीय अभिकलित्र पर आधुनिकतम परिमित अवयव विधि अथवा जांच मार विधि–विश्लेषण से अभिकल्प करने के बाद इंजीनियर बांध के परिच्छेद को बेलन सिद्वान्त से परखना नहीं भूलता ।

अतः जब डिकेन सूत्र हमारे इंजीनियरिंय समाज में इतना आत्मसात हो गया है तो इसका उचित वैज्ञानिक विश्लेषण एंव प्रस्तुतीकरण क्या व्यवहारिक नहीं?

बाढ शिखर अथवा बाढ काल

यह सत्य है कि बॉधों के उत्प्लाव के अभिकल्प में बाढ शिखर के परिमाण का बहुत महत्व है। परन्तु बाढ नियत्रण कार्यो के लिये क्या बाढ शिखर का परिमाण अधिक महत्व पूर्ण हैं या कम शिखर वाली परन्तु अधिक समय तक रहने वाली वाढ का अर्थात अधिक बाढ अपवाह का। इस विषय पर विचारने की आवश्यकता है क्योकि इस विषय पर भारत में कोई अन्वेषणात्मक कार्य नहीं हुआ है।

सिंचाई विभाग उत्तर प्रदेश में बाढ नियंत्रण के कार्यो के उत्तरदायित्व के समय में मैने यह पाया कि एक उच्च शिखर वाली परन्तु कम अवधि की बाढ इतनी क्षति नहीं पहुंचाती जितनी कि कम शिखर वाली परन्तु अधिक समय तक रहने वाली बाढ पहुँचाती है। यह भी देखा गया है कि प्राकृतिक सरिताओं में विसर्पण ले आई एक कटिबंध पर, चरम निस्सरण की अपेक्षा प्रभावी (डौमीनैन्ट) निस्सरण का अधिक प्रभाव पड़ता हैं। हालांकि विसपर्ण पैटर्न पूरे निस्सरण चक्र का ही परिणाम हैं। यह प्रभावी निस्सरण चरम निस्सरण का आधे से दो तिहाई तक होता है। इन विसर्पणों की वक्रता एंव प्रभावी निस्सरण की अवधि नदी एंव कटिबंध तट को काटने में प्रमुख भूमिका निभाते है।

अतः यह आवश्यक है कि चरम बाढ शिखर के परिकलन की अपेक्षा, बाढ कार्यो के अभिकलन के लिये, प्रभावी बाढ एंव उसकी अवधि के आंकडों एक जलालेखों का अध्ययन अधिक एंव महत्वपूर्ण एंव आवश्यक है। दुःख इस बात का है

कि इस दिशा में न तो कोई अन्वेषणात्मक कार्य हुआ है और न आंकडे ही मिलते है। पूर्वी योरप के कुछ देशों में इस दिशा में कुछ प्रयास हुए हैं ओर इसको "बाढ घटना" (फ्लड ईवैन्ट) की सज्ञा दी जाती है।

बेसिन जल प्राप्ति

किसी भी जल स्रोत विकास योजना के लिये चरम बाढ़ एंव तदर्थ जलाशय के अलावा सबसे मुख्य परिकलन है, बेसिन या जल ग्रहण क्षेत्र से संभावित जल प्राप्ति ।अधिकतर अपवाह को अवसेषण (वर्षण) से संबंधी अनुभाविक सूत्र एंव तालिकाओं के आधार पर अनुमान करते हैं। सूत्रों में स्ट्रैन्ज की तालिका प्रमुख है उसमें वर्षा एंव अपवाह के अनुपात हैं जो आवाह क्षेत्रों की भूवैज्ञानिक एंव धरातलीय दशा के आधार पर है। अन्य सूत्रों में इंगलिस एंव डिसूजा, लेसी, खोसला आदि के सूत्र भी क्षेत्र विशेष में प्रयोग किये जाते हैं।

अन्वेषण का यह क्रम अब भी चल रहा है और वर्षा एंव अपवाह के वास्तविक परिमाणों के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों कें लिये विभिन्न अनुसंधान कर्ता वर्षा एंव अपवाह के अनुपाात एंव सूत्र देते रहते है।

इस क्षेत्र में बहुत से सैद्वान्तिक एंव प्रायिकता विधियों एंव गणितीय प्रारूपों पर भी काफी शोध कार्य हुआ है, जिनमें से कुछ हैं संहति (मास) वक्र, हर्स्ट विधि, थामस एंव बर्डन विधि, नाश–सतक्लिफ प्रारूप, थामस,–फ्रिरिंग प्रारूप, आरीमा प्रारूप आदि आदि। ये सब विधियां व्यवसायिक इंजीनियरों के लिये प्रयोग करना आसान नहीं है अतः वे अपवाह को वर्षा का एक प्रतिशत मानकर (जो कुछ आंकड़ों के आधार पर या अनुभव के आधार पर होता है), जल प्राप्ति या जल उपलब्धि की मात्रा का अनुमान कर लेते हैं। इसी कारण आज भी स्ट्रैन्ज की तालिका फील्ड में कान करने वाले इंजीनियरों में प्रचलित है।

अच्छा होगा कि प्रारम्भिक अनुमान के लिये पूरे देश के विभिन्न क्षेत्राों के लिये स्ट्रैन्ज जैसी तालिकायें हों या अपवाह एंव अवसेपर्ण के मानचित्र हों जो राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान प्रत्येक 10 वर्ष बाद पुनरीक्षित करती रहें। ये व्यवहारिक मानचित्र किसी भी बेसिन के लिये जल प्राप्ति की मात्रा और संचयन संबंधी निष्कर्ष निकालने में बहुत सहायक होगें। अधिक विस्तृत एंव सही जानकारी के लिये विभिन्न प्रारूपों की सहायता ली जा सकती है। इस प्रकार की तालिकायें एंव मानचित्र यह कहकर न बनाना कि ये अनुभाविक है और हमारी जल विज्ञान क्षेत्र में ज्ञान की उन्नति को नहीं दर्शाती, कोई व्यवहारिक तर्क नहीं है। शोध एंव गणितीय प्रारूप एंव सैद्वान्तिक विधियॉ वे अच्छी होती हैं जो सीधी भाषा में एंव रूप में प्रर्दशित की जा सकें।

जल स्रोत विकास कार्यो में जल का परिमाण (चरम बाढ, एंव जल उपलब्धि) के बाद दूसरा महत्वपूर्ण विषय है अवसाद (तलछट)। इस विषय में अन्वेषण, परिकलन एंव अभिकलन में जो व्यवहारिक कठिनाइयां है उन पर भी थोडा विचार करना श्रेयकर होगा।

अवसाद (तलहट)

सादभार

तलहटीकरण एक कठिन समस्या है जिसका अभी कोई मितव्ययी समाधान नहीं निकाला गया है, सिवाय इसके कि जलाशय के जीवन में आने वाली साद के लिये जलाशय में एक संयम क्षमता अलग निष्क्रिय "संचयन" के नाम से छोड दी जाये। विघटन, अपरदन, संचरण एंव तलहटी जलाशय सदन की विभिन्न अवस्थायें है। अब तक जो भी कार्य इस क्षेत्र में हुआ था इंजीनियर जब भी जलाशय सदन के विषय में सोचते हैं तब दो प्रकार के साद परिमाणों की बात करते है, एक है तलभार या तल में साद का परिमाण। इसमें प्रवाह की सबसे निचली तहों वाला तलछट होता है। तलभार का संचरण लोटन, सर्पणा और छलांग क्रियाओं द्वारा, जिनका सामुहिक नाम वल्गन (साल्टेशन) हैं, होता है और यह प्रवाह के वेग पर निर्भर है।

जब प्रवाह का वेग बढ जाता है, तब प्रवाह के प्रक्षुब्ध वेग के उपरिमुखी घटक द्वारा वल्गन के सादकण निलंबन में फेंक दिये जाते हैं। अतः निलंबन द्वारा साद संचरण, तलभार संचरण की एक अग्रगत अवस्था है, जो उर्ध्वाधर अक्षों वाले भँवरों से और तीव्र हो जाती है। साद कणों का भार, परिग्रामी (सराउन्डिंग) तरल पर आधारित रहता है।

तल भार एवं निलंबित भार का अनुपात

तल भार की मात्रा मालूम करने के लिये अनेक माप किये गये हैं परन्तु प्रत्येक सरिता की विविधता, जल ग्रहण क्षेत्र की विविधता एवं विषमता, अवसाद भार की मात्रा एवं उसके वितरण आदि में इतना अधिक विचरण है कि सही अनुपात अनुमान करना, अगर असंभव नहीं तो दुरूह अवश्य है । इसी कारण तलभार की मात्राा निलंबित भार की मात्राा का 2 प्रतिशत से 15 प्रतिशत तक हो सकता है। सामान्यतः यह अनुपात 10–15 प्रतिशत लिया जाता है।

तलभार का ठीक अनुमान अति आवश्यक है क्योंकि सरिताओं की तलोच्यन एवं तलावचन की समस्या, जलाशयों में तलछटीकरण आदि इतने महत्वपूर्ण विषय हैं जिनके लिये तल भार का उचित परिमाण जानना एक वांछित व्यवहारिकता है। विभिन्न शोध संस्थानों में तलभार प्रति दर्शित डिजाइन किये है परन्तु सब में कुछ न कुछ खामियॉ है । यह खामियॉ सरिताओं की पहाड़ी एवं उप पहाड़ी अवस्थाओं में अधिक सामने आती हैं जहां नदी में बालू की अपेक्ष बजरी या गोलाश्म हों। अतः पहली व्यवहारिक आवश्यकता तो यह है कि तलभर प्रतिदर्शित्र की डिजाइन पर और अधिक अन्वेषण किये जाये और यदि आवश्यक हो तो नदी की विभिन्न अवस्थाओं, पहाडी, उप पहाडी, जलोढ़ एवं डेल्टीय, के लिये अलग–अलग चार प्रकार के प्रतिदर्शित डिजाइन किये जाये।

जब तक यह नही होता तब तक अनुभव, अन्वेषण एंव साहित्य के आधार पर तल भार को निलबिंत भार का एक अनुपात मानकर काम चलाना ही व्यवहारिक है। जब तक तल भार एंव निलबिंत भार का एक ही नदी के हों तब अनुपात नदी की विभिन्न अवस्थाओं/रीचों में लाना/निकाला जा सकता है। इस विधि में समस्या तब आती है जब नदी बांध के ऊपर जलाशय में आकर मिलती हैं। ज्यों ज्यों जलाशय की गहराई बढती है त्यों त्यों प्रवाह का वेग भी घटता जाता है और तलभार/ निलंबित भार का अनुपात बहुत तेजी से बदलने लगता है। अगर निलबिंत भार बालू, सिल्ट और चिकनी मिट्टी के कणों का मिश्रण है, या उसमें महीन कण बहुत अधिक हैं तो उस अनुपात को निर्धारण करने में कठिनाई आती हैं। बागनोल्ड के सिद्वान्त के अनुसाार कोई भी सादकण निलबंन अवस्था में तभी रह सकता है जब उस साद कण का पतन वेग एंव प्रवाह के अपरदन (शीयर) वेग का अनुपात एक से कम हो। अब कल्पना कीजिये कि एक जलाशय में ऐसी अवस्था आ जाये कि क्रांतिम पतन वेग का मान ऐसा निकल आये कि लगभग 80 प्रतिशत निलबिंत भार, कभी तल पर बैठे ही नहीं सदा निलबिंत रहे (अंग्रेजी में इसे वाशलोड कहते हैं) तो तलभार एंव निलबिंत भार का क्या अनुपात लिया जाये। यह ऐसे प्रश्न है जिनका समुचित उत्तर जानना जलाशय के तलछटीकरण एंव जलाशय के शिखर पर बनने वाले डेल्टा से संबधित हैं। अतः इस विषय में भारत के समस्त जलाशयों के डेल्टा निक्षेप का अध्ययन आवश्यक है। दुःख है कि इस विषय में भारत ने कुछ भी काम नहीं हुआ है जिसकी अति आवश्यकता है।

गणितीय प्रारूप

तलछट अभिगमन या संचरण के ऊपर लगभग 100 वर्ष से भी अधिक समय से शोधकार्य हो रहा है ओर तलछट के तलोच्यन (ग्रेडेशन) एंव तलावचन (डिग्रडेशन) ज्ञात करने के लिये विभिन्न शोधकर्ताओं ने विभिन्न विधियॉ एंव सूत्र निकालें परन्तु जो व्यवहारिक सूत्र सन 1930 में उ. प्र. सिंचाई विभाग के इंजीनियर जेराल्ड रेसी ने दिये वे आज भी अन्य सैकडों सूत्राों की अपेक्षा अधिक मान्य है।

पिछले दो दशकों में कुछ महत्वपूर्ण सूत्रों एंव विधियों के आधार पर गणितिय प्रारूप बने हैं जिनके अंकीय अभिकलित्र (डिजीटल कम्पयूटर) को प्रयोग करने पर जलोढ़ सरिता (नदी या नहर) के तल पर साद अभिगमन एंव कालान्तर में उच्चयन एंव उप चयन का परिमाण अनुमान किया जा सकता है। यहां पर कहना संगत होगा कि विभिन्न प्रारूप, एक ही आंकडों के विभिन्न फल दे सकते हैं, क्योकि विभिन्न प्रारूपों में विभिन्न सूत्र प्रयोग किये गये हैं।

यह काम अधिकतर विदेशों में हुआ है। भारत में इस दिशा में कुछ पहल हुई है। डब्ल्यू. आर. डी. टी. सी. रूडकी विश्वविद्यालय में डा. नयन शर्मा एंव राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान रूडकी के वैज्ञानिक डा. पलनिआप्पन ने इस दिशा में नये प्रारूप विकसित किये है। यह एक प्रशंसनीय प्रयास है।

समस्या तब आई जब जलाशयों के तलछटीकरण का प्रश्न उठा । अब तक भारत में जो जलाशय बने थें वे इतने बडे–बडे थें, जैसे नागर्जुन सागर, रिहान्ड, हीराकुन्ड, भाखड़ा आदि, जिनमें वार्षिक साद की मात्रा, अनुमानित मात्रा से अधिक आने पर भी, से उनके 100 वर्ष में भी भरने की संभावना नहीं थी। अब जो बांध बनाने के नये स्तर सामने आये उनके बांध को प्रतिप्रवाह में जल संचय की क्षमता, बांध की ऊंचाई के अनुपात में, पहले जलाशयों की अपेक्षा काफी कम थी। दूसरे वर्तमान जलाशयों में तलछटी करण के परिमाणों की जांच करने पर यह पाया गया कि पूर्वानुमान काफी कम थे। अतः इन दोनो ऋणात्मक कारणों से यह आवश्यक हो गया कि ठीक ढंग से जलाशय में तलछटीकरण का वितरण निकाला जाय। यह समस्या ओर भी दुरूह हो गई जब अतंग्राही डेल्टा क्षेत्र में हो जैसा उडीसा के ऊपरी इद्रावती जल विद्युत परियोजना में हुआ । अतः यह आवश्यक हो गया कि तलछटी करण के वितरण के साथ साथ (वितरण बोरलैडं एंव मिलर की विधि द्वारा निकाला जा सकता है) डेल्टाग्रतली संस्तर (बाटम सैट), डेल्टाग्र मध्य संस्तर (फोरसैट) एंव डेल्टाग्र शीर्ष संस्तर (टाप सैट) का वास्तविक रूप जाना जाय। अगर हो सके तो सघन धारा (डैनसिटी करैंट) निक्षेप भी मालूम किया जाय।

यह एक व्यवहारिक समस्या थी और इस विषय में कार्य भी गणितीय प्रारूप उपलब्ध नहीं था। उपलब्ध, जलोढ, धाराओं के लिए उपयुक्त गणितीय प्रारूपों की सहायता से डेल्टा का रूप निकाला गया परन्तु मन में शंका रह गयी कि क्या यही वास्तविक निक्षेप है। यह ऐसा विषय है कि जिसके लिये गणितीय प्रारूप बनाना अति आवश्यक है। भारत में अनेकों नये जलाशय बनेगे। संसार के विकसित देशों की अपेक्षा हमारे यहां अवसाद की मात्रा भी बहुत बडी समस्या है। इन समस्याओं का समधान ढूढंने के लिये सतत शोध कार्य एंव असीम अभिकलित्र में प्रयोग करने हुतु भारतीय वातावरण के अनुसार गणितीय प्रारूप विकसित करने की व्यवहारिक आवश्यकता है।

उपसंहार

उपर्युक्त विवरण में चरम जल लब्धि एंव अवसाद के परिमाण परिकलन संबंधी कुछ व्यवहारिक अवसाद के कुछ व्यवहारिक संमस्याये इंगित की गई हैं जिनपर जल विज्ञान के भारतीय शोध कर्ताओं एंव अन्वेषकों को कार्य करना व्यवहारिक एवं लाभप्रद होगा।

संदर्भ

वार्ष्णेय – र.शं. "सिंचाई इंजीनियरी एंव कृषि जल उपयोग" खण्ड 1 एंव 2 – शिक्षा तथा समाज कल्याण मंत्रालय भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ योजना के अर्न्तगत हिन्दी ग्रन्थ अकादमी प्रभाग, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा प्रकाशित –1980